ओ३म्

राधास्वामी पाखण्ड–खण्डन

आचार्य डॉ० श्रीराम आर्य

॥ ओ३म् ॥

राधास्वामी—पाखण्ड-खण्डन

लेखक

आचार्य डॉ० श्रीराम आर्य

कासगंज (एटा) उ० प्र०

प्रकाशक

श्री घूडमल प्रहलादकुमार आर्य धर्मार्थ न्यास

ब्यानिया पाड़ा, हिण्डौन सिटी (राजस्थान)

प्रकाशक : **श्री घूडमल प्रहलादकुमार आर्य धर्मार्थ न्यास**
ब्यानिया पाड़ा, हिण्डौन सिटी, (राज०) - ३२२ २३०
दूरभाष : ०९३५२६७०४४८
चलभाष : ०९४१४०३४०७२, ०९८८७४५२९५९

संस्करण : २००८ (ऋषि दयानन्द के बलिदान का १२५वाँ वर्ष)

मूल्य : १०.०० रुपये

प्राप्ति-स्थान : १. **हरिकिशन ओम्प्रकाश,** ३९९, गली मन्दिरवाली, नया बाँस, दिल्ली-६, चलभाष : ०९३५०९९३४५५

२. **सुबोध पॉकेट बुक्स** २/४२४०-ए, अंसारी रोड, नई दिल्ली-२ चलभाष : ०९८१०००५९६३

३. **श्री राजेन्द्रकुमार,** १८, विक्रमादित्य पुरी, स्टेट बैंक कॉलोनी, बरेली (उ०प्र०) चल० : ०९८९७८८०९३०

४. **श्री वैदिकानन्द,** श्री स्वामी दयानन्द ब्रह्मज्ञान आश्रम न्यास, वैदिक सदन, भँवरकुँआ, इन्दौर-४५२ ००१, चलभाष: ०९३०२३६७२००

५. **गणेशदास-गरिमा गोयल,** २७०४, प्रेम-मणि निवास, नया बाजार दिल्ली-६, चलभाष : ०९८९९७५९००२

६. **श्री दयारामजी पोद्दार,** झारखण्ड राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, आर्यसमाज मन्दिर, स्वामी श्रद्धानन्द पथ, राँची (झारखण्ड)-८३४ ००१
चलभाष : ०९८३५७६५७४३

लेजर टाईपसेटिंग : आर्य लेजर प्रिंट्स, हिण्डौन सिटी, राजस्थान

मुद्रक : अजय प्रिण्टर्स, शाहदरा, दिल्ली - ११० ०३४

राधा स्वामी मत-खण्डन

राधा स्वामी मत नाम का एक सम्प्रदाय अन्य अनेक गुरुडमवादी सम्प्रदायों की तरह लगभग एक सदी से पंजाब, उत्तर प्रदेश आदि कई प्रान्तों में फैल रहा है। इस मत में भी अन्यों के समान ही गुरु को साक्षात् परमात्मा मानकर तन, मन, धन सभी कुछ गुरुजी को समर्पित करने तथा उनकी ही कृपा से समस्त पापों से मुक्ति मिलने की बात बताई जाती है। नामकरण भी इस सम्प्रदायवालों ने उसी प्रकार से कल्पित किया है। राधा स्वामी शब्द का अर्थ तो राधा का पति होता है। राधा नाम की गोपी से श्रीकृष्ण जी के प्रेम की कथाएँ हिन्दुओं में बहुत प्रसिद्ध हैं। लोग श्रीकृष्ण जी को राधा का पति, उसके हृदय का स्वामी मानते हैं। तब राधा स्वामी का अर्थ श्रीकृष्ण जी होता है। कोष में भी राधा का अर्थ एक गोपी जो श्रीकृष्ण की बहुत प्यारी थी, एक नक्षत्र, विशाखा नक्षत्र, यह दिया है, पर **इस सम्प्रदायवालों ने राधा स्वामी नाम परमात्मा का घोषित कर रखा है, जिससे लोगों में इस सम्प्रदाय को नई कल्पनाओं के साथ प्रचलित किया जा सके।**

ईश्वर या परमेश्वर आदि परमात्मा वाचक नामों का बहिष्कार करके उसे कुल मालिक कहा जाता है। जब सम्प्रदाय नया ही चलाना है तो सभी कुछ नये रूप में ही उपस्थित करना पड़ता है, जिससे प्राचीन वैदिक धर्म से स्पष्ट भिन्नता कायम रह कर गुरुडमवादी नया पन्थ चालू हो सके। यद्यपि यह नाम शब्दार्थ की दृष्टि से सर्वथा गलत है। कोई भी व्यक्ति जो अपनी सभी सम्पत्ति का मालिक होता है, कुल मालिक होता है। राधा स्वामी शब्द ईश्वरवाचक हो ही नहीं सकता, किसी भी राधा स्त्री का पति राधा स्वामी कहलाता है।

यथार्थप्रकाश भाग १ में पृष्ठ १ पर लिखा है—

''और जैसे मानुषी देह को रचने और जान देनेवाली उसकी एक आत्मा, अर्थात् सूरत है ऐसे ही सारी सृष्टि को रचने और जान देनेवाली एक है 'परम आत्मा', जिसको कुल मालिक या राधा स्वामी दयाल कहते हैं।''

इस राधा स्वामी दयाल शब्द की काल्पनिक व्याख्या इस सम्प्रदायवालों ने भी जिस प्रकार की है, वह भी कम मनोरञ्जक नहीं है। वे लिखते हैं—(यथार्थप्रकाश भाग १ पृष्ठ २६ देखो)

''रचना से पहिले चैतन्य शक्ति अपने केन्द्र में गुप्त थी। इसी को

शून्य समाधि की अवस्था कहते हैं। धीरे-धीरे एक समय आया जब कुल मालिक, अर्थात् चैतन्य शक्ति के भण्डार में क्षोभ (हिलोरें) होने पर आदि चैतन्य धार प्रकट हुई जो कि शक्ति के प्रत्येक आविर्भाव के साथ-साथ एक शब्द प्रकट होता है, इसलिए भण्डार की हिलोर से 'स्वामी' शब्द और आदि चैतन्य धार से 'राधा' शब्द प्रकट हुआ।'' ...जिससे मनुष्य की बोली में राधा स्वामी शब्द बनता है, इसी कारण यह नाम कुल मालिक का निज नाम माना जाता है।

ये कल्पनाएँ स्पष्ट अनर्गल हैं। परमात्मा (चैतन्य शक्ति) का कोई केन्द्र ही नहीं होता है। सीमित एक स्थान पर रहनेवाला अनन्त हो ही नहीं सकता है। ईश्वर सर्वव्यापक अनन्त सत्ता है। अनन्त विश्व में प्रतिक्षण क्रियाशील रहता है। न कोई ऐसा केन्द्र स्थान हो सकता है, जिसमें परमात्मा सिमिटा बैठा रहता हो। विश्व के अनन्त लोक-लोकान्तर हमारी पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र या तारागण आदि निराधार विश्व में बिना आपस में टकराए कैसे भ्रमण कर रहे हैं, यदि कोई सर्वव्यापक सर्वाधार परमेश्वर की सत्ता उनको धारण व सञ्चालन नहीं कर रही है।

विश्व अनन्त है, सृजन-पालन-विनाश एवं विश्व के प्रत्येक अंश के कण में क्रिया प्रतिक्षण होती रहती है, जो परमेश्वर की सर्वव्यापक सत्ता के हर समय क्रियाशील रहने का प्रमाण देती है। इस सम्प्रदाय में अन्य मुसलमानादि के समान परमात्मा को भी एक लोक में रहनेवाला सीमित साकार सत्ता मान रखा है।

जीवात्मा के बारे में भी इसने उसे कहीं अनादि सत्ता लिखा है तो कहीं उसे उत्पन्न होनेवाला माना है। यथार्थप्रकाश भाग १, पृष्ठ ३६ पर लिखा है—

''राधा स्वामी मत बतलाता है कि सुरत, अर्थात् आत्मा अनादि पदार्थ है, अर्थात् वह सदा से विद्यमान है। इसका कोई आदि नहीं है। रचना से पहले सब सुरतें (आत्माएँ) कुल मालिक में लीन थीं।''

इसमें सभी आत्माओं को अनुत्पन्न अनादि सत्ता स्वीकार किया गया है।

'वे जीवों को याद दिलाते हैं कि वे कुल मालिक के अंश हैं।'

—सन्त समागम पृ० ८९

''इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता कि हमारी आत्मा आध्यात्मिकता के अपार समुद्र की एक बूँद है या हम कह सकते हैं कि हम सबके अन्दर

परमात्मा का ही एक अंश है।'' —सन्त समागम पृ० ९५

''दर असल हर आत्मा स्थूल परदे में छिपा हुआ सर्वशक्तिमान् परमात्मा ही है।'' —स०समा०पृ० ९६

''यह आत्मा तो परम आनन्द और चेतनता के उस समुद्र की एक बूँद है, जिससे बिछड़े हुए इसे करोड़ों साल हो गए हैं। यह तो इस पराए देश में परदेशी की तरह है।'' —स०समा०पृ० ३५

''हाँ बेशक आत्मा उसी परम तत्त्व का अंश है।''

—स०समा० पृ० ११७

''एक समुद्र है, दूसरा उसकी बूँद है।'' —स०समा०पृ० ११८

''वह उस समय पैदा हुई जब आत्मारूपी बूँद अपने समुद्र सच खण्ड से अलग हुई। सच खण्ड तो केवल प्रकाश, परमानन्द और चेतनता का निर्मल आत्मिक देश है।'' —स०समा०पृ० १२८

इन प्रमाणों से स्पष्ट है कि इस मत में जीवात्मा की स्वतन्त्र अनादि सत्ता को नहीं माना जाता है, वे उसे सच खण्ड (परमात्मा) का अंश मानते हैं, उसी में से टूट-टूट कर असंख्य टुकड़े बनकर जीवात्मारूपी छोटे परमात्मा पैदा होकर जन्म मरण के चक्करों में घूमते-फिरते हैं। ईश्वर और जीव में अंश अंशी सम्बन्ध है। मुक्त होने पर वह फिर ईश्वर में मिलकर ईश्वर बन जाते हैं, जैसे समुद्र में से पृथक् होनेपर बूँद बनती है व पुनः उसी में मिलने पर समुद्र बन जाती है। अपनी हस्ती मिटाकर नष्ट हो जाती है।

इस परमात्मा पर हमारी कुछ आपत्तियाँ हैं। निर्विकार परमात्मा (सचखण्ड) में उसके हिस्से टूटने वा गलने या टुकड़े पृथक्-पृथक् होने का विकार कब और क्यों पैदा हुआ था? या किसी अन्य ने परमात्मा (सच खण्ड) को काट कर करोड़ों अरबों टुकड़े किए थे, जो इस मत में सुरत (आत्मा) कहलाए थे। ये खण्ड स्वयं अनादि परमात्मा में से पैदा क्यों हुए थे? किसी चीज में से खण्ड तभी हो सकते हैं, जब वह चीज अनेक खण्डों से मिलकर बनी हो। जिसमें परमात्माओं का संयोग हुआ हो, उसी में उनका वा उनके समूह का वियोग वा खण्ड हो सकता है, पर जब परमात्मा संयोगजन्य सत्ता नहीं है तो उसके खण्ड नहीं हो सकेंगे। जब सच खण्ड (परमात्मा) के कुछ भाग के खण्ड हो सकेंगे तो फिर सम्पूर्ण सच खण्ड (परमात्मा) के भी खण्ड होकर उसका पूर्ण विनाश क्यों न सम्भव होगा? तब आपका परमात्मा अनादि अनन्त न होकर पूर्णतः नाशवान् सत्ता बन जावेगा। कुछ खण्ड उसके कटने पर उतने हिस्से में वह कटा हुआ

अधूरा रह जायेगा। जो पूर्ण नहीं रहेगा तो अपूर्ण अल्पज्ञ भी हो जायेगा। जो आपका परमात्मा अपूर्ण नाशवान् होगा वह अनन्त विश्व को धारण करनेवाला सर्वव्यापक भी न रह जायेगा। सर्वज्ञ परमेश्वर में क्या रोग लग गया कि उसे अपने टुकड़े करने पर विवश होना पड़ा और अपने ही अंश छोटे परमात्माओं को माया के चक्कर में फँसा कर संसार में दु:ख भोगने को फैंक देना पड़ा? आपका परमात्मा तो एक स्थान पर मौज से अपने लोक में कहीं बैठा आनन्द करता है तथा उसके खण्ड जीवात्मा इस पृथिवी पर मारे-मारे अनाथ बन भटकते फिरते हैं। यह लोक आपके लेखानुसार आत्मा या परमात्मा का पराया लोक है। तब इसका मालिक कौन है? आप इसका देखने भालनेवाला किसी गैर परमात्मा को मानते हैं, तो उसका नाम व अधिकार क्या है? जो सर्वव्यापक सर्वाधार नहीं है वह परमात्मा कैसे हो सकता है? आपके परमात्मा का क्षेत्र वा राज्य कितना बड़ा है तथा वह जितने स्थान में समाया हुआ है, वह कितने वर्गमील स्थान है? आपके परमात्मा के एक देशवासी होने से वह इस अनन्त विश्व में छोटा सा प्राणी बन जायेगा। तब यह भी बताना होगा कि वह किस धातु व परमाणुओं से कब बना था, क्योंकि जिसके खण्ड हो सकते हैं व परमाणुजन्य उत्पन्न हुई सत्ता होनी स्वयं सिद्ध है? तब वह नाशवान् भी होगा, क्योंकि सादि (उत्पन्न होनेवाला) होने से मरणधर्मा होना अनिवार्य है।

करोड़ों साल पूर्व आपके परमात्मा के असंख्य खण्ड एक साथ एक ही समय में हुए थे या धीरे-धीरे कुछ काल तक कट-कट कर खण्ड गिरते रहे थे? क्या अब भी उसके खण्ड होते रहते हैं और वे नये जीवात्मा बनकर इस लोक में गिरते रहते हैं? ये खण्ड इस जमीन पर ही क्यों गिरे थे परमात्मा के ही लोक में क्यों न पड़े रहे या शून्याकाश में हवा में क्यों न उड़ते रहे? इन पर कोई पूर्व कर्म बन्धन तो थे नहीं तब ये विभिन्न योनियों में क्यों और फाँस दिए? इन पर माया का बन्धन किसने किस दण्डस्वरूप लगा दिया? आपके परमात्मा को अपने ही खण्डों (अंश) जीवों पर दया क्यों नहीं आई, जो उन्हें उसी समय अपने में मिला लेता। यह तमाशा निर्दयी बनकर उसने क्यों किया कि पहले तो अपने टुकड़े करा दिए फिर उनको पराए लोक पृथ्वी पर फैंक दिया और अब उनकी मदद खुद न करके उनके कल्याण के लिए राधा स्वामी मत में खुद अवतार लेकर गुरु बनता रहता है। बार-बार जन्म लेकर मरता रहता है। यह सारा ड्रामा आपका परमात्मा सच खण्ड क्यों खेला करता है? क्या वह इस तरह तमाशा खुद ही नर्तक व खुद ही दर्शक बनकर किया करता है? इस सबसे उसको क्या आनन्द आता है? अंशी (खण्ड) जब भी पूर्ण (अंश) में से

पृथक् हुआ होगा तभी से उसका जन्म व आयु निश्चित हो गई। बतावें अंशी कब व क्यों अपने पूर्ण सच खण्ड से अलग होकर जीवात्मा या अंशी बना था? किस मजबूरी में परमात्मा को अपने अंश अलग करने पड़े थे? यह मत मानता है कि परमात्मा मनुष्य बनकर ड्रामा खेलता है। देखो लिखा है—

"गुरु वह कर सकता है जो परमात्मा नहीं कर सकता। इन्सान के साथ रहने और संसार में काम करने के लिए परमात्मा को मनुष्यरूप में आना ही पड़ता है। —स०समा०पृ० १२६

"जब भी परमात्मा इस संसार में आता है और वह आता ही है तो हमेशा मनुष्य के रूप में आता है।...वह इस संसार में आकर मनुष्य से बात कर सकता है। उसे समझा सकता है।"

—स०समा०पृ० १९८

"सन्त तो दया का स्वरूप ही होते हैं। ...वे केवल हम लोगों के उद्धार के लिए इस जड़ संसार में मनुष्य देह धारण करके कष्ट उठाते आते हैं। हमें इस अज्ञान, अन्धकार तथा मृत्यु के लोक से उभार कर वापस अपने धाम, अनन्त सुख और सच्चे आनन्द के लोक में ले जाने के लिए ही वे यह हाड़, मांस का चोला धारण करते हैं। वे केवल हमें अपने असली घर का रास्ता ही नहीं दिखाते, बल्कि हमारे कर्मों के भारी बोझ को भी अपने सर पर ले लेते हैं...सन्त परमात्मा के ही रूप होते हैं।...मृत्यु के बाद भी वह हमारे साथ रहता है।...जिन्हें वह नाम देता है, उन सब सत्संगियों के कर्मों का बोझ अपने ऊपर ले लेता है।" —स०समा०पृ० २१०,२११

"लेकिन यह बात निश्चित है कि नाम की प्राप्ति के बाद कोई भी जीव मनुष्य योनि से नीचे की योनि में जाकर जन्म नहीं लेगा और नाम लिये हुए जीव को सच खण्ड परमात्मा तक पहुँचने में चार जन्मों से अधिक नहीं लगेंगे। —स०समा०पृ० २१२

प्रश्न—पाप की उत्पत्ति कहाँ से है?

उत्तर—हर चीज परमात्मा से ही पैदा हुई है।

—स०समा०पृ० १९९

जिसे पूरे गुरु से नाम मिल चुका है, यम दूत उसके पास तक भी आने की हिम्मत नहीं करते, यहाँ तक उनका स्वामी यम भी सतगुरु के शब्द से डरता है। अगर वे किसी सत्संगी को ले जायेंगे तो खुद सतगुरु को उन्हें छुड़ाने के लिए वहाँ जाना पड़ेगा और उसका नतीजा होगा कि तमाम नरकवासियों को फौरन वहाँ से रिहाई मिल जायेगी और नरक खाली हो

जायेगा।'' —स०समा०पृ० ११३

''परमात्मा अपने धाम से बैठा-बैठा अपने धाम से बातें नहीं करता। यह उसका नियम है।'' —स०समा०पृ० १६३

''.....परमात्मा ने नर रूप धारण किया है और जीवों को चेताने के लिए गुरु के रूप में जगत् में आए हैं, वे अपने चेलों को याद दिलाते हैं कि वे कुल मालिक के अंश हैं जो उनमें विश्वास करते हैं, उन्हें वे वापस अपने असली घर ले जाते हैं।''

—स०समा०पृ० ८९

''अगर मौत के समय हमारी कोई मदद कर सकता है और धर्मराज के दरबार में हमारे साथ जाता है तो वह केवल गुरु है। उसकी मौत के समय सतगुरु प्रकट होंगे और उसको अपने साथ ले जायेंगे।'' —स०समा०पृ० ६८

''रचना की क्रिया के प्रारम्भ होने से पूर्व सब सुरते कुल मालिक में लीन थीं, क्योंकि कुल मालिक की शक्ति अपने केन्द्र में लीन थी। जब उचित समय आने पर कुल मालिक की शक्ति की धार प्रकट हुई तो उसके प्रभाव से असंख्य सुरतें अनादि निद्रा से उन्निद्र, अर्थात् जाग्रत हो गईं, किन्तु ऐसी भी सुरतें थीं जो माया के आवरण के कारण उस समय जागृत न हो सकीं।'' —यथार्थ प्र०पृ० ४६

''सुरतें या आत्माएँ मालिक की अंश हैं वे अनादि हैं।''

—यथार्थ प्र० पृ० २१४

''वह परमदेव एक स्थान पर ही बैठा हुआ सारे संसार में व्याप रहा है।'' —यथार्थ प्र० भाग १ पृ० २६० भाग २

आपके परमात्मा की धारा कभी-कभी बहती है तो क्या वह बर्फ की तरह हमेशा जमी रहती है और गरमी पड़ने पर बहने लगती है? वह कितने दिनों तक जमी रहती है और कब व क्यों बहने लगती है? यह नियम आपके परमात्मा के जमे व बहने लगने का किसने कब बनाया था? सृष्टि और प्रलय कब और क्यों होती है? इन बातों का कोई समाधान आपकी किताबों में क्यों नहीं गढ़कर लिखा गया है? जीवात्मा को भिन्न-भिन्न योनियों में कर्मानुसार भेजने जन्म देने की व्यवस्था कौन करता है? क्योंकि सर्वव्यापक परमात्मा को तो आप मानते ही नहीं हैं?

यथार्थप्रकाश भाग १ पृ० ३६ पर लिखा है—''सुरत अर्थात् आत्मा एक अनादि पदार्थ है, अर्थात् वह सदा से विद्यमान है।'' तो जो अनादि होता है वह किसी का अंश व खण्ड नहीं होता है।

इस सम्प्रदाय में कहीं तो जीवात्माओं को इनके कल्पित परमात्मा का अंश लिखा गया है, जिसका अर्थ है कि किसी समय विशेष में उसके खण्ड होकर जीवात्मा बने थे और जब वे परमात्मा में से टूटकर अलग हुए थे तभी से उनकी आयु प्रारम्भ हुई थी, अर्थात् अनादि हमेशा से नहीं थे। उत्पन्न होनेवाली कोई भी वस्तु कभी न कभी नष्ट भी होती है। जिसका आदि होता है, उसका अन्त भी होता है। जिसका एक किनारा होता है, उसका दूसरा किनारा भी अवश्य होता है। पर यथार्थप्रकाश में लिखा है कि आत्माएँ रचना से पूर्व विद्यमान थीं व मूर्छित अवस्था में कुल मालिक में लीन थीं। इसका अर्थ है कि वे अनादि हैं। जब अनादि हैं तो वे इनके परमात्मा का कटकर अंश नहीं हो सकती हैं, जैसा कि अंश होना सन्त समागम पुस्तक में इनके एक गुरुरूपीय परमात्मा ने घोषित किया है। सच खण्ड परमात्मा के घर में भी आत्माओं पर माया हावी रहती है तो परमात्मा पर भी रहती होगी।

यह भी द्रष्टव्य है कि आत्माएँ दो तरह की क्यों बताई हैं, एक वे चेतन्य हो गयीं तथा दूसरी वे जो फिर भी मूर्छित बनी रहीं। परमात्मा के अंश होने पर तो एक ही तरह की आत्माएँ कहनी चाहिए थीं। क्या कुल मालिक का कुछ शरीर शुद्ध था, जिससे शुद्ध आत्मा के खण्ड कटे थे और अशुद्ध अंग से गन्दे खण्ड कटकर घटिया-बढ़िया आत्माएँ बन गयी थीं। यह सब उनके अज्ञानी गुरुओं की बेतुकी कल्पनाएँ हैं।

यह भी एक पाखण्ड पूर्ण कल्पना है कि परमात्मा एक-दूसरे लोक में बैठा या लेटा रहता है और वहीं से अवतार ले लेकर अपना दिल खुश करने को गुरु बन-बनकर जीवों के मार्गदर्शन को आता रहता है। वह अपने दूर के मकान में बैठा-बैठा लोगों से न तो बातें कर सकता है और न उनको उपदेश दे सकता है। सच्चाई यह है कि प्रत्येक मनुष्य को अपने अन्तःकरण में ईश्वर की प्रेरणा सदैव सुनाई पड़ती है, जो ईश्वर की ओर से होती रहती है। जितना मनुष्य उसे सुनने का यत्न करता है, उतनी ही स्वच्छ प्रेरणा वह सुनने में समर्थ होता है। ईश्वर के अवतार वा जन्म लेने की गप्पाष्टक सम्प्रदाय चलानेवालों व गुरुओं ने लोगों को बहकाकर चेले फाँसने के लिए कर रखी है, जो खुद की पूजा कराने व अपना आनन्दमय जीवन बिताने के लिए उड़ा रखी है।

यदि ईसा मुहम्मद सन्त मत के गुरु लोग ईश्वरावतार थे तो उनके उपदेश परस्पर विरोधी क्यों हैं? वे भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी रोग-भोग कष्टों में क्यों फँसते रहे थे? जवानी, बुढ़ापा व मृत्यु के हमलों से वे अपनी

रक्षा भी क्यों नहीं कर सके थे? एक गुरुजी कौन थे वे दोनों आँखोंवाले क्यों नहीं बन सके। वे तो अवतार थे। उनके सर के बाल सफेद क्यों हो गए? शरीर पर झुर्रियाँ क्यों पड़ गयीं। बीमार होने पर खुदा गुरु साहब डॉक्टरों से इंजेक्शन क्यों लगवाते रहे। भूख, प्यास ज्वरादि से क्यों परेशान रहते थे। वे तो परमात्मा बनने के दावेदार थे तो अपने स्वरूप का चमत्कार क्यों न दिखा सके थे। उनके सत्संगी चेले क्यों मर जाते थे, उनको जिन्दा क्यों नहीं कर देते थे। उनके मरने पर यमराज के दूतों से वे उनकी रक्षा करने का पाखण्ड क्यों फैलाते हैं? जब वे स्वयं मरे तो उनको जिन्दा रखने उनका गुरु क्यों नहीं आया था। भोले लोगों को मूर्ख बनाने के लिए अपने को खुदा बताने में मिथ्या भाषण करने में हर शरीफ आदमी को लज्जा आती है पर स्वार्थ में अन्धे लोग सभी कुछ झूठे सच्चे दावे करते रहते हैं। जैसे राधा स्वामी मतवालों ने किए हैं। पता नहीं पढ़े लिखे लोग ऐसे पाखण्डों पर कैसे विश्वास कर लेते हैं। जब मनुष्य भी दूसरों के मन की बात अभ्यास से जान लेते हैं व अपने मन की बात औरों के मन में डाल देते हैं तो ईश्वर द्वारा सर्वव्यापक होने से ज्ञान देने पर आक्षेप क्यों है?

अब से १५ साल पहले की बात है कि एक रूसी राकेट सीधा आपके सचखण्ड से जा टकराया था। उसने आपके खुदा को उसके तख्त को, उसके महल को व पूरे सचखण्ड को जला कर ध्वस्त कर दिया था। अब कोई आपका परमात्मा व उसका लोक शेष नहीं है। यह हमको बताया गया है कि इस मत के सन्तों का यह भी दावा पाखण्ड पूर्ण है कि सन्त अपने चेलों के पापों की जिम्मेदारी अपने ऊपर लाद लेते हैं और चेलों को पापों से मुक्त कर देते हैं। यही दावा ईसा ने किया था, जिसे फाँसी पर चढ़ाकर मार डाला गया था और मृत्यु पूर्व वह मौत के तख्ते पर रोता रहा था। यही दावा राधा स्वामी मतवाले करते रहते हैं। क्या पाप कोई शरीर पर बाहर से चिपटे होते हैं, जो सन्त जी छुड़ाकर अपने ऊपर लाद लेते हैं। पाप पुण्य तो शुभ-अशुभ कर्मों के फल को कहते हैं। जो करनेवाले को परिणामस्वरूप भोगने पड़ते हैं। उनके फलों से कर्ता व्यक्ति बच ही नहीं सकता है। यह अलग बात है कि उपदेशों से वह आगे कुकर्म न करे। पर कृत कर्मों के फल से वह बच ही नहीं सकता है। कोई व्यक्ति कत्ल करे, डाके डाले, लोगों की सम्पत्ति हरे, दुष्ट कर्म करे और बाद को गुरुजी का चेला बन जावे और गुरुजी कह दें कि मैंने तेरे सभी पापों की गठरी अपने ऊपर ले ली है और तुझे मुक्त कर दिया है। तो क्या गुरुजी के माफ कर देने से वह दण्ड या कानून से बच जायेगा? जो कुकर्मों के संस्कार उसके अन्तःकरण पर पड़े हुए हैं, क्या वे गुरुजी के कहने-मात्र से नष्ट हो जायेंगे? जिन

लोगों की उसने हत्याएँ की हैं, डाके डाले हैं, लोगों का धन हरण किया है और जो भी कुकर्म व पाप उसने किये हैं, उनका पीड़ितों का बदला गुरुजी को जेल भेज कर चुकाया जायेगा या उस पापी को ही दण्ड देना न्याय होगा। जीवों के कर्मों का रिकार्ड कौन याद रखेगा? ईश्वर को तो आप मानते नहीं हैं। पापियों को माफ करने से पाप की प्रवृत्ति बढ़ेगी। पापों के प्रति जो घृणा होती है, उससे भय मिटकर पाप कर्मों के प्रति निर्भयता पैदा होगी व समाज ध्वस्त हो जायेगा। स्पष्ट है, यह गुरु लोग भोले लोगों को पाप नाश का धोखा देकर चेले फाँसने का जाल फैलाने को गन्दे हथकण्डे इस्तेमाल किया करते हैं।

यथार्थप्रकाश का यह वाक्य इस अर्थ में सत्य है कि गुरु वह (झूठे) काम भी कर सकता है जो परमात्मा भी नहीं कर सकता है। यदि इस वाक्य का और कुछ अर्थ किया जायेगा तो वह मिथ्या दावा होगा। यह भी दावा उनका गलत है कि जिसे पूरे गुरु का नाम मिल चुकता है, उसके पास यमदूत भी आने में डरते हैं तथा यमदूत भी गुरुजी से डरते हैं। गुरुजी भी मरते हैं, रोगी बनकर मरते हैं, मौत से वे अपनी भी रक्षा नहीं कर पाते हैं तो बेचारे औरों की रक्षा करने का लोगों को धोखा क्यों देते हैं। सज्जन लोग सच बोलना पसन्द करते हैं, झूठे दावे वे नहीं किया करते हैं। इस मत के गुरु लोग अपने मिथ्या दावे ठीक वैसे ही किया करते हैं, जैसे मुहम्मद ने मुसलमानों से व ईसा ने इसाइयों से किए थे। ये सब सम्प्रदाय चलाने के हथकण्डे हैं।

विश्व में नरक व स्वर्ग नाम के कोई स्थानविशेष नहीं हैं, उनका नाम ले लेकर लोगों को डराया जाता है। हिन्दू ग्रन्थ, कुरान, बाइबिल आदि इनके काल्पनिक वर्णन से भरे पड़े हैं। स्वर्ग व जन्नत के प्रलोभन देकर अपने मतों व सम्प्रदायों में लोगों को बहका कर चेलों को सभी गुरुज्यवादियों ने भर्ती करके खूब लूटा खाया है व पन्थ चलाये हैं। यही हथकण्डे राधा स्वामीवालों ने अपनाए हैं। उन्होंने भी स्वर्ग ले जाने के पासपोर्ट लोगों को दिए हैं, बल्कि खुद ही गुरुजी ने लोगों को साथ ले जाकर उनके परमात्मा के मकान (लोक) तक पहुँचाने का झाँसा दिया है। वस्तुतः स्वर्ग नरक इसी लोक में सुख-दुःख की स्थितियों के नाम हैं। सुख मिलने पर स्वर्ग कहा जाता है तथा दुःख मिलने की दशा वा स्थिति को नरक कहते हैं।

गुरुजी का यह दावा भी गलत है कि मरने के बाद वह हर सत्संगी की आत्मा के साथ रहता है। जीवात्मा एक देशीय सत्ता है, वह मनुष्य के साथ सर्वत्र संसार में एक ही समय में नहीं रह सकता है। सब जगह तो सर्वव्यापक

परमात्मा ही विद्यमान रह सकता है, किन्तु सन्त मत में उनका खुदा इस जमीन पर नहीं रहता है। इस लोक को उसने परदेश लिखा है। तब उनका ईश्वर इस लोक में आ ही नहीं सकता है। गुरुओं की गप्पाष्टकें भी बे सर पैर की होती हैं।

गुरु लोगों के रूप में परमात्मा जन्म लेकर यहाँ आकर कष्ट उठाते हैं, यह कहना भी मजेदार है। वह किसी भी रूप में रहे या आवे, क्या परमात्मा को भी कष्ट होता है। क्या परोपकार के काम करने पर लोग दुःख अनुभव करते हैं। लोग तो परोपकार के काम करने पर प्रसन्न होते हैं। कैसा तुम्हारा फर्जी तमाशे का कमजोर परमात्मा है, जिसे कष्ट भी होता है। वह दुःखी भी होता है। पहले अपने परमात्मा को दुःख सुखों की भावना से मुक्त बनाओ। दोनों हालातों में प्रसन्न रहने का अभ्यास कराओ। उसके बाद उससे कहना कि मिस्टर सचखण्डरूपी खुदा! अब तुम जन्म लेकर भारत में आना, इससे पहले मत आना, वरना लोग तुम पर हँसेंगे। तुम्हारे गुरु अवतारों की मखौल उड़ायेंगे। यदि इतना अभ्यास न हो पाये तो अपने बहुत दूर के लोक में सोते-बैठते खाते-पीते मजे में रहा करना।

राधा स्वामी मत में फँसे चेलों को चार जन्म में मुक्ति मिल जायेगी। यह भी दावा गुरुजी का मजाकपूर्ण है। मुक्ति कोई पँसारी की दुकान पर मिलनेवाली वस्तु नहीं है और न स्कूलों में मिलनेवाला पास फेल का सर्टीफिकेट है। इसे गुरुजी ठीक उसी प्रकार बाँटते हैं, जैसे इटली का पोप रुपये जमा करने पर स्वर्ग जाने का प्रमाणपत्र ईसाई लोगों को दिया करता था। मोहम्मद व ईसा भी मुक्ति का ठेका लिये हुए थे। पर वे एक ही जन्म में मुक्ति देते थे। इनके गुरु उनसे पिछड़ गए हैं, जो चार जन्मों की बात कहते हैं। गुरुजी महाराज! मुक्ति बड़े योगाभ्यास से, आत्मा को संस्कारों से निर्लेप करने पर, निष्काम कर्म करते रहने पर श्रेष्ठतम कर्म करते रहने पर, गलत कर्मों से बचने पर, आध्यात्मिक विषय में विशेष ज्ञानी बनने पर पाप कर्मों के भोगों के परिणाम भोगकर, उनका क्षय होने पर, परमशुद्ध आत्माएँ ही एक या अनेक जन्मों में आवागमन के चक्र से छूट पाती हैं। गुरुजी पर उनके परमात्मा का पापियों या सत्संगी या कुसंगी लोगों को अपनी मर्जी से मुक्ति का ठेका रहता हो तो वह सर्वथा झूठा दावा है और मूर्खों को धोखा देकर चेले फँसाने का जाल है। ऐसा ही दावा ब्रह्माकुमारी मत का लेखराज, हँसा मत का गुरु, राधा स्वामी मत के सन्त लोग, शैव, वैष्णव मतवाले भी करते रहते हैं। इस देश में गप्पियों की भरमार रही है। धर्म की आड़ में स्वर्ग व मोक्ष के एजेण्ट सभी सम्प्रदायों में भरे पड़े हैं। आप में कोई नई बात उनसे भिन्न नहीं है। जैसे और हैं, वैसे ही आप हैं।

आपने लिखा है पाप की उत्पत्ति परमात्मा से हुई है। यह भी गलत है। गलत कर्मों के करने को पाप कहते हैं। यह गुरुओं के बहकाने से अपनी अज्ञानता से जीव करके धर्माचरण के विपरीत कर्म करके लोग स्वयं करते हैं। ईश्वर किसी को कुकर्म करने को प्रेरित नहीं करता है, जैसे गुरु लोग स्वार्थवश लोगों को गलत पट्टी पढ़ाकर गलत मार्ग पर चेले बनाकर डाल देते हैं और पापी बना देते हैं तो ईश्वर उनको प्रेरणा नहीं करता है। जरा-सा जीवात्मा विश्वाधार, सर्वव्यापी बनने व उसका झूठा अवतार बनने का दावा करता है, यह भी उसका पाप कर्म है, पर दोष परमात्मा को अपने कर्मों का देता है।

''कारे वद तो खुद करें और दोष दें शैतान को।''

गुरुजी का यह दावा भी मजेदार है कि गुरुजी यदि नरक में पहुँच गए तो सभी नरकवालों को वहां से मुक्त करा देंगे। जब यमदूत उनको पकड़ कर जान से मार गए और ले गए तो वे उनके फन्दे से कैसे छूट सकेंगे। आपके यमदूत तो आपसे भी बलवान् हैं, आपका भी उनपर मरते वक्त बस नहीं चल सका। तब आप फर्जी नरकवालों को क्या बचा सकेंगे? दावा वह करना चाहिए जो ठीक बैठ सके। आप दो चार सौ वर्ष तो जिन्दा बने रहते। आप तो थोड़े ही दिनों में यमदूतों द्वारा समाप्त कर दिए गए। कौन आपकी बात पर विश्वास करेगा?

राधा स्वामी मतवाले गुरुजी कितनी बेतुकी गप्पें उड़ाते हैं, एक खुला नमूना देखें, सन्त समागम पुस्तक में पृ० १९६ पर लिखा है कि गुरु अर्जुनदेव जी ने कहा कि वे सत्य की खोज में बहुत घूमे तब भी ये......''काशी में जाकर बट के नीचे अपने दो टुकड़े भी करवा लिये। लेकिन इन सबसे भी उनकी अन्दर की आँखें न खुलीं।''

अपने तप, त्याग व लगन की महानता प्रदर्शित करने को लोग मिथ्याभाषण ऐसे ही करते है, जैसे राधा स्वामी मत के गुरु लोग। प्रसिद्ध है कि काशी में एक तेज धार का मशीनी चक्र किसी गङ्गा के मन्दिर में लगा था, उसके ठीक नीचे शिव की मूर्ति लगी थी। लोहे का तेज धार का चक्र गङ्गा के पानी के बहाव से तेजी से घूमता रहता था। भोले परेशान लोगों से पण्डे कहते थे कि मोक्ष चाहो तो लेट कर अपनी गर्दन चक्र पर लगा दो तो सर कटकर नीचे शिवजी की मूर्ति पर गिर जाता था और शरीर गङ्गाजल में बह जाता था। उसका पैसा पण्डा ले लेते थे। इस मरने को काशी करवट लेना कहते थे। ब्रिटिश राज्य ने यह पाखण्ड बन्द करा दिया था। उसी के बारे में लिखा है कि गुरु अर्जुनदेव जी ने वहाँ अपने टुकड़े भी कराए थे पर

उनको शान्ति नहीं मिली थी। यह दृष्टान्त एकदम गलत है। गुरु हो या साधारण व्यक्ति जब काशी करवट में सर कट कर नीचे शिवमूर्ति पर गिर गया, धड़ अलग हो गया तो गुरुजी की मृत्यु हो गई थी। मरने पर फिर सर जुड़ कर गुरुजी अपनी कथा बताने को जिन्दा हो ही नहीं सकते थे। ऐसी ही बातें गुरु लोगों के महत्त्व बढ़ाने को इन सन्त गुरुओं ने फैला रखी हैं, जो बिल्कुल गलत व बे-सर पैर की हैं। कोई अक्लवाला इन गप्पों पर विश्वास कैसे कर सकता है। पर राधा स्वामी लोगों की बात दूसरी है, जो अक्ल से काम लेना ही नहीं जानते हैं, यदि लोग समझ जावें तो ये सारे गुरुडमवादी सम्प्रदाय समाप्त हो जायें।

जैसा कि इन्होंने लिखा है कि इनका सचखण्ड परमात्मा जीवों के कल्याण व मार्गदर्शन के लिए अवतार लेकर जमीन पर आता रहता है, यह पाखण्ड भी इन्होंने गीता के दो श्लोकों के वास्तविक अर्थ को न समझ कर अपने सम्प्रदाय प्रसार के लिए फैलाया है।

सन्त समागम पृ० ९७ पर गीता का उदाहरण ईश्वर अवतार के समर्थन में दिया गया है। जो निम्नलिखित है—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥ ७॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥ ८॥

—गीता अ० ४। श्लोक ७ व ८॥

इन श्लोकों का भाव यह है कि जब-जब संसार में धर्म की हानि होती है, अन्याय अत्याचार बढ़ जाते हैं, तब-तब वहाँ देश में धर्म की स्थापना के लिए विशेष आत्माएँ जन्म लिया करती हैं, वे आत्माएँ तीन काम करती हैं : (१) संसार में सज्जनों, साधुओं व धर्मात्माओं की रक्षा करती हैं। (२) दुष्ट कर्मों या दुष्ट कर्म करनेवालों का विनाश करती हैं। (३) सत्य सनातन वैदिक ईश्वरीय धर्म वा कर्त्तव्य पर चलने का प्रचार वा स्थापना करती हैं।

ऐसा विश्व के इतिहास में सदैव होता रहा है। पर यदि इसका यह अर्थ लिया जायेगा कि परमात्मा जन्म लेकर कर्म करने आता रहता है और राधा स्वामी मत के गुरु लोग भी उसी परम्परा में ईश्वरावतार होते हैं तो अर्थ गलत हो जायेगा। इस अर्थ के अनुसार तो कोई व्यक्ति अबतक अवतार साबित ही नहीं कर सकेगा। ईश्वर के सभी काम संसार-भर के प्राणियों की रक्षा के लिए होते हैं न कि स्थान विशेष के लिए होते हैं।

यदि ईश्वरावतार होते थे तो किसी ने भी संसार-भर के लोगों की रक्षा, संसार से दुष्टों का नाश तथा संसार में धर्म का प्रचार कभी नहीं किया था। राम व कृष्ण का क्षेत्र अपने परिवार वा कुटुम्ब तक कुछ युद्धों तक सीमित रहा था। धर्म-प्रचार के लिए या संसार की रक्षा के लिए वे कभी अन्य प्रान्तों में, भारत में या उसके बाहर नहीं गए थे। इस कसौटी पर आजतक एक भी अवतार साबित नहीं होगा। ईश्वरावतार माननेवालों के दावों को जाँचने की यह गीताकार की तीन शर्तों की पूर्ति करना एक कसौटी है। जब भी कोई ये तीनों काम करेगा उसे इस कसौटी पर अवतार माना जायेगा।

सन्त मत का कोई गुरु भी गीता की इस कसौटी पर खुला नकली अवतार साबित होगा। संसार में परिस्थितियाँ बदलती रहती हैं। कोई-कोई आत्मा स्वकर्मों व योग्यता से उभर कर सामने आती है और विशेष काम करने से जनता में पूजने योग्य आदर प्राप्त कर लेती है। भावुकता में श्रद्धावश लोग उसे रक्षक ईश्वरावतार मानने लगते हैं। पर जो कोई अपने को ईश्वरावतार घोषित करने लगता है, वह पाखण्डी, ठग, सम्प्रदायवादी, छली-कपटी ही होता है। जरा-सा अणु-जैसा जीव अपने को अनन्त विश्व का आधार, सृजनहार, सर्वव्यापक परमात्मा बताने लगे तो लोग उसे महामूर्ख मानने लगते हैं। पाखण्डी लोग अपने बारे में ऐसे धोखा देकर सिद्ध बन बैठते हैं। इन पाखण्डी ठगों से सभी को बचना चाहिए। किसी गलत दावे को सही मान लेने से या सही बताने से वह सही नहीं हो जाता है। अपने को पूर्ण सन्त या ईश्वरावतार बतानेवाले घमण्डी व चतुर ठग होते हैं। सच्चे सन्त स्वयं को अकिञ्चन और ईश्वर का दास तो कहते हैं पर मूर्ख लोग खुद को ईश्वर का अवतार बताते हैं।

सन्त समागम पुस्तक में पृ० १११ पर लिखा है कि गुरुजी ने कहा— ''जब मनुष्य मरता है तो वह केवल एक कार्य क्षेत्र से दूसरे में भेज दिया जाता है। पर उसके पिछले कर्मों का हिसाब उसके साथ जाता है। जहाँ भी जायेगा, उसको यह कर्मों का हिसाब चुक़ाते रहना पड़ेगा। कुदरत बड़ा सख्त साहूकार है, जो कर्ज आपने उठाए हैं, उनके भुगतान से आप बच नहीं सकते। जैसा बोओगे वैसा काटोगे। मनुष्य अपने कर्मों का फल पाता ही है। वह अपने किए कर्मों का खुद जिम्मेवार होता है.....एक जन्म में हम कर्मों का इतना कर्ज लाद लेते हैं कि जिसे उसी जन्म में या केवल एक ही जन्म में चुकाना असम्भव है।''

आखिर यह सच्चाई गुरुजी के मुँह से निकल ही गई। जब यही बात है और वैदिकधर्म व अन्य हिन्दू सम्प्रदाय भी उसे मानते हैं तो गुरुजी के

दावे बिलकुल गलत हो जाते हैं, जिनमें गुरुजी चेलों के पाप माफ कर देंगे। चेलों को मरने के बाद साथ-साथ जाने और उन्हें अपने फर्जी स्वप्नलोक सचखण्ड में ले जाने, ज्यादा से ज्यादा चार जन्मों में मुक्ति दिलाने के झाँसे देकर चेले मूँड़ने, चेलों से यमराज व उसके यमदूतों के डरकर भाग जाने की बातें, उन्होंने बताई हैं। जब सभी को अपने किए सभी भले बुरे कर्मों के फल जरूर भोगने पड़ते हैं तो फिर गुरुजी के भ्रामक चक्कर में क्यों फँसा जावे, क्यों उनको तन, मन, धन अर्पित किया जावे और उन्हें ईश्वर का अवतार मानकर क्यों पूजा जाये? जब कर्मों के बन्धन से वे छुड़ा ही नहीं सकते हैं और यह कुदरत के हाथ में बँधे हुए हैं तब गुरुजी भी उसी के बन्धन में क्यों न बँधे होंगे? उनमें और साधारण मनुष्यों में भेद कुछ नहीं है।

अपने चेले बनाने के लिए सभी सम्प्रदायवालों ने जनता को यही आश्वासन दिए हैं, जो राधास्वामी मतवाले देते रहते हैं। कोई नई बात किसी ने नहीं बताई है। शैवों ने शिवलिङ्ग के प्रातः दोपहर शाम को दर्शन करनेवालों को रातभर के, जन्मभर के वह सात जन्मों तक के पाप नष्ट होने की बातें लिखी हैं। वैष्णवों ने भी तत्काल मुक्ति का दावा किया है। गङ्गा नाम हजारों कोस दूर से कह देने से गङ्गा के दर्शन या जलपान से समस्त पापों का नाश होना बताया है। मुहम्मद का चेला बनने पर जन्नत (स्वर्ग) जाना, ईसा पर विश्वास लाने से मुक्ति मिलना, हँसा मत व ब्रह्माकुमारी मत के चेले बनकर तन, मन, धन गुरु को अर्पण करने से हँसालोक व शिवलोक में जाने की पक्की गारण्टी की गई है। वैसे ही राधास्वामी मतवालों की धोखाधड़ी प्रत्यक्ष है। सभी ने पापनाश व मोक्ष के लिए आसमानी खुदाओं के चेले बनने के झाँसे दिए हैं।

ऊपर लेख में गुरुजी ने कुदरत द्वारा जीवों के कर्म भोग की अनिवार्य एवं कठोर व्यवस्था होने की बात कही है। यह कुदरत क्या है यह नहीं खोला है। कुदरत राधास्वामी मत का फर्जी खुदा सच खण्ड या राधास्वामी तो हो नहीं सकता है, अनन्त विश्व में नित्य व्यापक सर्वोपरि व्यवस्थापक सर्वशक्तिमान् सत्ता एवं जीवों को कर्मफल प्रदाता ईश्वर को ही लक्ष्य करके कहा गया है, क्योंकि शरीर से छोटा सा राधास्वामियों का खुदा तो ऊपर बहुत दूर आकाश में किसी कल्पित सचखण्ड के लोक किले में बैठा रहता है, जैसा कि गुरुजी ने बताया है। वह तो इस पराए संसार में आता ही नहीं है। उनकी गप्पों के अनुसार उस खुदा के सचखण्ड से इस पृथ्वी पर अवतार ही कभी-कभी आया करते हैं, जिनका काम गुरु बनकर चेले मूँडकर अपने पन्थों के लिए धन सम्पत्ति इकट्ठा करना व सम्प्रदाय चलाना रहता है जो कि राधा स्वामी मत के गुरुओं के कहने से स्पष्ट है। वे बेचारे

तो जीवों के कर्मफलों को देने का काम करते नहीं हैं। जीवों को कर्मानुसार जन्म देना, भोगों के फल देना, दु:ख-सुख देना, अन्य जन्मों में भेजना उनका काम नहीं होता है। तब जो सत्ता यह सब कुछ करते हुए अनन्त विश्व को चला रही है, इस ईश्वर को ये सम्प्रदायी लोग क्यों स्वीकार खुलकर नहीं करते हैं तथा उसे न मानकर बेतुके उसूल गढ़कर धर्म ज्ञान से शून्य जनता को क्यों भ्रम में स्वार्थवश डालते व पाप कमाते रहते हैं। जबकि खुद भी ईश्वर की व्यवस्था में बँधे हुए हैं। कभी सच बोलना फिर दूसरी जगह उस सत्य के विरुद्ध बकवास करना, क्या यही इस सम्प्रदाय की विशेषता है?

"सन्त यदि परमात्मा के ही रूप होते हैं (स०समा०पृ० २१०) तो आकाश में सदेह उड़कर या परकाया प्रवेश करके ही दिखा देवें, जो योगी भी कर सकते हैं, वे चमत्कार के साथ मनुष्य से भैंस बन जावें, चींटी की भाषा क्या है, यही सुनकर बता देवें, जमीन में गढ़ी सम्पत्तियाँ बता देवें, जमीन में कहाँ तेल व सोना-चाँदी, पारा, कोयला गैस के भण्डार हैं, रेगिस्तान में जमीन के नीचे पानी के भण्डार कहाँ हैं, किसी भी लोक के निवासियों से सम्पर्क करके वहाँ का हाल बता देवें, पंजाब के उग्रवादियों (कातिलों) के पते पुलिस को बताकर उसकी सहायता ही करें, काने की फूटी आँख ही ठीक कर देवें। सुना है आगरा के एक आपके गुरुजी दृष्टिबाधित थे, उनकी दोनों आँखें ठीक क्यों न हो गई थीं। व्यर्थ परमात्मापने का दावा करते संकोच होना चाहिए। सीधे-सीधे तरीके से मनुष्य अपने को बताते रहा करो। ईश्वरावतार का दावा करना नासमझी की बात है।"

राधा स्वामी गुरु का पक्का चेला बनने पर कोई नीचे की योनि में जन्म नहीं लेगा, यह गप्प हाँकना तुम्हारा ही काम है। जब सारी व्यवस्था कुदरत नामधारी चैतन्य ईश्वरीय सत्ता करती है, जिसका तुम अपने से कोई सम्बन्ध नहीं मानते हो व अपना विरोधी मानते हो तो तुम उसे नीचे की योनि में अपने कर्मानुसार जीवों को भेजे जाने से रोक सकनेवाले कौन हो? 'छोटा मुँह बड़ी बात' अच्छी नहीं लगती है, जो तुमको तन, मन, धन दे देवें, उन भोले-भाले चेलों को फँसाने का तुम्हारा यह हथकण्डा बुरा है। आपका कहना "मनुष्य के सामने प्रकट होने के लिए, मनुष्य से बोलने के लिए और उसे समझाने के लिए परमात्मा को मनुष्य का चोला धारण करना पड़ता है और कोई रास्ता नहीं है (सन्त समागम पृ० १२५)। यह भी आपकी बाल बुद्धि की बकवास है, कोरा पाखण्ड है ताकि भोले लोग तुमको भी अवतार मानकर पूजने लगें।"

इस पुस्तक में अनेक स्थानों पर गुरुजी के चमत्कार दिखाने का भी वर्णन आता है। एक स्थान पर एक व्यक्ति के माथे पर अंगुली से छू देने मात्र से उसे घण्टे बजने की ध्वनि सुनाई देने लगने की बात भी लिखी है। जब एक छोटे-से शरीर में रहनेवाला मनुष्य अपने विचार दूसरे के दिलों में डाल सकता है, मैस्मरेजम से घण्टे बजने की ध्वनि सुना सकता है तो सर्वव्यापक परमात्मा अन्तःकरण में अपने द्वारा मार्गदर्शन क्यों नहीं कर सकता है ? आप इसे क्यों नहीं मान लेते हैं। सभी सन्तों, शुद्ध हृदय लोगों व तपस्वी विद्वानों को अन्तःकरण के माध्यम से सत्य का आभास सदैव होता रहा है व अब भी होता रहता है। मस्तिष्क में लघुमस्तिष्क के माध्यम से अभ्यासीजनों को भूत, भविष्यत् व वर्तमान की अनेक बातों का आभास होनेपर प्रत्यक्ष ज्ञान हो जाता है। यह तो एक साधारण-सी साधना से आ जाता है, इसमें ईश्वरत्व की कोई बात नहीं है। शरीर के स्पर्श से अनेक रोग ठीक किए जा सकते हैं। यह पासेज देने की क्रिया का मनोवैज्ञानिक अभ्यास करना पड़ता है। मैस्मरेजम से भी लोग विलक्षण प्रयोग दिखा सकते हैं तो क्या वे सब ईश्वर बन जाते हैं ? यह तो ईश्वरत्व की पहचान नहीं है।

ईश्वर का कार्यक्षेत्र निर्माण, विकास, स्थायित्व एवं नियमानुसार विनाश, अर्थात् कार्य को कारण में लीन करना होता है और इस सारी प्रक्रिया को सदैव जारी रखना है। जीवों का क्षेत्र कर्म करना, फल भोगना, उन्नति-अवनति करना, पुनर्जन्म के चक्र में घूमना, योग्यता होने पर मोक्ष सुख का आनन्द उठाना आदि हैं। आप ईश्वरीय क्षेत्र में मानव का व मानवीय कार्यक्षेत्र में परमेश्वर को घुसेड़ना यह कार्य गलत व अज्ञानतापूर्ण करते हैं। जब प्रत्येक मानव को पूर्ण स्वतन्त्रतापूर्वक कर्म करने का अधिकार है और मानव को मानव भी सत् असत् उपदेश देने में समर्थ होता है तो फिर अवतारवाद की गुञ्जायश कहाँ है ? किसी भी कुछ विकसित मनुष्य को तुम अवतार बताने लगते हो, यह तुम्हारी भूल है। मानव के अन्दर कुछ अलौकिक शक्तियाँ भी होती हैं, उनका विकास करके वह विशेष ज्ञानवान्, पुरुषार्थी बन जाता है। योगाभ्यास से वे विशेष विकसित हो जाती हैं। पर फिर भी वह सीमित शक्तिवाला ही रहता है। अनन्त या अपरिमित विकास उसका नहीं हो सकता है। आप उदाहरणार्थ संसार में लाखों देख सकते हैं। आप गुरु लोग इस तथ्य को समझते रहते हैं पर चेले फँसाने के लिए व्यर्थ की मिथ्या गप्पें उड़ाकर अपने को ईश्वरावतार बताने की धृष्टता करने से भी आप लोग नहीं चूकते हैं। यह गलत है। ऐसा करना महापाप है। इससे आपको बचना चाहिए। सम्प्रदाय की, आपकी चाहे गद्दी भाड़ में जावे, पर

आपको सत्य बात जनता को बताने का साहस अपने में पैदा करना चाहिए। यह गद्दी भी मरने पर आपके साथ नहीं जायेगी और लोगों को गुमराह करने व परमात्मा बनकर धोखा देने के पाप कर्मों का फल भोगने से भी आप न बच सकेंगे।

यथार्थप्रकाश भाग १ पृ० २४१ पर लिखा है—

"कुल मालिक अनन्त और अपार चेतना प्रेम और आनन्द का अपार सागर हैं। उसमें बहुत-सी कलाएँ या दिव्य शक्तियाँ हैं, जिनको रचना का कार्यभार सौंपा गया है, उन्हें पुरुष कहते हैं। इन पुरुषों में एक परब्रह्म पुरुष है। इसके अधिकार में ब्रह्माण्ड और पिण्ड की रचना की उत्पत्ति और संभास है....इस पुरुष को काल पुरुष भी कहते हैं। यह पुरुष सृष्टि की उत्पत्ति और प्रलय का काम करता है। जो काम इसको सौंपा गया है, उसे यह पूरा आज्ञाकारी और निष्पक्ष रहकर करता है। यह पुरुष मनुष्यों को उनके कर्मों के अनुसार नीचे ऊँचे लोकों में जन्म दिलाता है और जिस पर प्रसन्न होता है, उसे अपने लोक में जिसे सुन्न स्थान कहते हैं, जन्म देता है।"

पाठकों ने अफीमची बहुत देखे होंगे जो नशे की पिनक में न जाने क्या-क्या बकते रहते हैं पर राधा स्वामी मत के से पिनकी न देखे होंगे। अपने खुदा सचखण्ड या राधा स्वामी दयाल को बहुत बड़ा सर्वोपरि बताने के लिए जिस परमेश्वर की संसार विश्वपति मानकर उपासना करता है और केवल एक परमात्मा को जगदाधार मानकर पूजता है उसे अपने फर्जी खुदा का गुलाम लिखकर अनेक ईश्वरों की मूर्खतापूर्ण कल्पना कर डाली है।

एक अफीमची कह रहा था कि मैं तो उस खुदा को पूजता हूँ, जिसकी बूट पॉलिश राधा स्वामी दयाल किया करता है तो दूसरा अफीमची बोला असली खुदा तो मैं ही हूँ, सबको मुक्ति मेरी गोली खाते ही मिल जाती है। मैं ही राधास्वामी मत के गुरुओं का गुरु साक्षात् अवतार हूँ। मैं चाहूँ तो संसार के राधास्वामियों को अपने सुल्फे की चिलम में फूँक दूँ। अपना थूक चटाकर झूठा खिला कर एकदम सीधा सचखण्ड तक पहुँचा दूँ। मैं चाहूँ तो एक ही क्षण में दूसरी जमीन बना दूँ। चाँद सूरज को एक कोठरी में ताले में बन्द कर दूँ। यह सब जो दीखता है कुछ भी नहीं है। मेरे गुरुजी की फूँक से उड़ाया जा सकता है।

शेखचिल्ली गुरुओं को बैठे-बैठे बेहूदी गप्पें गढ़ने के अलावा और कुछ आता नहीं है। सभी सम्प्रदायवादियों ने ऐसी ही गप्पें गढ़-गढ़ कर लोगों को बहका रखा है। विष्णु भगवान् इस जमीन से १७ करोड़ योजन

ऊपर रहते हैं तो शिवजी उनसे भी १६ गुने ऊपर, अर्थात् २५६ करोड़ योजन ऊँचे आसमान में रहते हैं (स्कन्द पुराण)। ईसाई खुदा चौथे आसमान पर बताये जाते हैं तो कुरानी खुदा सातवें आसमान पर तख्त पर बैठा रहता है। राधा स्वामी खुदा भी ऊपर कहीं बैठता है। मजा यह है कि इस जमीन पर एक भी खुदा देवता नहीं रहता है, पर माल सभी इस जमीन के खाते हैं और लोगों के उद्धार के ठेकेदार बने बैठे हैं। इन परदेशी खुदाओं के जमीन पर आने के लाइसेन्स (पासपोर्ट) सरकार को रद्द कर देने चाहिए, ताकि इस जमीन की सम्पत्ति को खुदा यहाँ से न ले जा सकें।

(नोट—आत्मा तथा परमात्मा के विषय में वास्तविकता जानने के लिए पुस्तक ईश्वरसिद्धि पढ़ें।)

सन्त समागम पृ० २११ पर लिखा है, गुरुजी ने बताया—"काल और सत्गुरु के काम एक-दूसरे से बिलकुल भिन्न हैं। सन्त, आत्माओं को इस दुनिया के जेलखाने से छुड़ाने के लिए आते हैं। काल इस जेलखाने का जेलर है। वह नहीं चाहता कि उसकी जेल कभी खाली हो। इसलिए वह हर एक आत्मा को इस कैदखाने में रखने के लिए सन्तों से जबर्दस्त लड़ाई करता है।" (जब काल पुरुष को न्यायी माना है तो उससे लड़नेवाला कोई मूर्ख ही होगा जो खुद अन्यायी होगा।)

"सच्चा सत्गुरु और सच्चा मार्ग ये दोनों ही काल और माया के चंगुल से मुक्त होने के लिए बहुत जरूरी हैं।" —स०समा०पृ० १७२।

पूर्ण न्यायकारी परमात्मा का ग्रहण है, जैसा यथार्थप्रकाश में ऊपर लिखा है।

शब्द काल के निम्न अर्थ कोष में दिए हैं—"काला-यमराज, मौत-मृत्यु; समय-ऋतु-महेंगी, अकाल-सर्प, काल का दिन।" इनमें से आपका सम्बन्ध किस अर्थ से है स्पष्ट नहीं है। शायद यमराज से होगा। कोष में यम शब्द के अर्थ दिए हैं—रोकना, दण्ड देना, वश करना, यमराज, धर्मराज, काल, इन्द्रियों को रोकना, जोड़ना।

धर्मराज का काम धर्मपूर्वक न्याय करना होता है। कोष में भी धर्मराज का अर्थ लिखा है—यम, न्यायी राजा, धर्म से शोभा पानेवाला आदि। आपने भी उसे पूर्ण न्यायप्रिय माना है तो जो धर्मपूर्वक न्याय करता है, सत्कर्मों का सुफल तथा पापकर्मों का यथायोग्य आवश्यकता के अनुसार दण्ड द्वारा जीवों के सुधार की व्यवस्था करता है। उससे राधास्वामी मत के मतवाले गुरु लोग केवल इसलिए दुश्मनी मानते हैं कि उसका न्यायी होना उन्हें पसन्द नहीं होता है। वे अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर न्यायी राजा

धर्मराज से विरोध करने का ठेका लिये होते हैं। यदि धर्मराज के स्थान पर कोई अधर्मराज बैठ जावे तो ये गुरवा लोग बहुत खुश होंगे। यह राधास्वामी सम्प्रदाय है। पाठक इसकी पाखण्डपूर्ण लीला देखें और इन गुरुओं की अज्ञानपूर्ण शिक्षा का दर्शन करें। नशे में ये अज्ञानी चेलों को मुक्ति देने का ठेका लिए बैठे हैं। यमराज, धर्मराज, सर्वव्यापक परमेश्वर आदि एक ही ईश्वर के नाम हैं। ये कोई अलग से इन्स्पेक्टर नहीं होते हैं।

ये गुरु लोग इस पृथ्वी को जेलखाना व जीव और परमात्मा का परदेश लिखते हैं। यह भी इनका पाखण्ड है। इनके सच्च लोक में बैठा रहनेवाला इनका फर्जी खुदा तो रूसी राकेटों से टकरा कर कभी का नष्ट हो चुका है। उसके नाम पर लोगों को बहकाना व ठगना खाना छोड़ देवें।

गुरुजी ने स्वीकार किया है कि 'अमीरी-गरीबी, सुख-दुःख, बीमारी-तन्दुरुस्ती जो सभी मनुष्य भुगतता है। अपने भाग्य में वह जन्म से ही लिखा कर लाया है।' उसमें ये गुरुजी क्या कर सकते हैं, जैसा लिखा लाया है, वैसा ही भुगतेगा। फिर ये चेलों का तन, मन, धन क्यों ठगते रहते हैं।

—स०समा०पृ० १०७

"धर्मराज का दरबार भी लगता है तथा उसका पक्का महल भी है।"

—स०समा०पृ० ६८

आप भी मानते हैं कि भाग्य मनुष्य के पूर्व किए क्रियमाण अवस्था के बाद की सञ्चित अवस्था के कर्म होते हैं और उनके भोग का समय होता है तो उसे भाग्य कहते हैं। हर जीव कर्म करता है, उनसे भाग्य बनता है। कर्मों के संस्कार अन्त:करण में सञ्चित रहते हैं। समय आने पर इसी या अगले जन्मों में वह उनके फल भोगता रहता है। जीवों को भाग्य (कृत कर्मों) के अनुसार अनादिकाल से आवागमन के चक्र में घूमते रहना पड़ रहा है। तब जीवों के कर्मानुसार भाग्य, अर्थात् उनके कर्मफलों, दण्ड व लाभ की व्यवस्था कौन कब कहाँ बैठकर करता है।

यह पृथ्वी तो जीवों के लिए कर्मस्थली है। यहीं जन्म लेना, यहीं खेलना, नाना प्रकार के सुख भोग भोगना, यहीं कर्मानुसार समय समाप्त होने पर शरीर छोड़ना और फिर कृत कर्मानुसार पुन: जन्म लेकर खट्टे मीठे जीवन के फलों का आनन्द उठाना यह सब कुछ चलता रहता है।

जब आपका खुदा अरबों खरबों मील ऊपर आकाश में कहीं आपके फर्जी स्थान सचखण्ड में बैठा-बैठा मजे मारता रहता है तो यहाँ की व्यवस्था हमारा ईश्वर ही तो करता है। आपने कहा है कि "अगर मौत के समय हमारी कोई मदद करता है और धर्मराज के दरबार में हमारे साथ

जाता है तो वह केवल गुरु है।'' कर्मानुसार दण्ड पाने की हालत में आपके गुरु लोग अपने सत्संगियों की वकालत या सिफारिश करने उनके मरने के बाद फैसले के समय अपनी कानूनी किताबें दीवानी और फौजदारी की लेकर उनके साथ अदालत की तरह लम्बा काला चोगा पहन कर बहस करने जाया करते हैं। जैसे कुरान के अनुसार मुसलमान पैगम्बर लोग किताबों के साथ पैरोकारी के लिए कयामत के दिन खुदाई कचहरी में पेश होंगे। पर यह नहीं बताया कुछ विशेष फीस भी आपको पेशी की मिलेगी या चेलों का तन, मन, धन जो पहले ही आप लोग ठग चुके हैं, वही इस मेहनताने में शामिल मान लिया जायेगा।

वाह गुरुजी वाह! आप तो चेलों का मरने के बाद भी पीछा नहीं छोड़ते हैं। पर यह तो आपका घोर अन्याय होगा। जब धर्मराज धर्मपूर्वक न्याय करनेवाला सिफारिश, चापलूसी या रिश्वत न लेनेवाला, सच्चा न्यायाधीश सच्चा न्याय उसके कृत कर्मों के अनुसार जो न्याय करने बैठेगा तब आप उसे बेईमानी सिखाकर अपने चेलों को सच्चे न्याय से वञ्चित कराने का यत्न करेंगे। वह तो न्याय नहीं होगा। सर्वज्ञ धर्मराज तो उसके बारे में सभी कुछ सर्वव्यापक होने से जानते होंगे। तब आप उन्हें क्या बताने जायेंगे? क्या आपको सच्चे निष्पक्ष न्यायी पर भी भरोसा नहीं है? यदि किसी ने आपको ज्यादा फीस देकर तोड़ लिया तो आप मुल्जिम को जरूर सजा कराके छोड़ेंगे और अगर धर्मराज ने सिफारिश से चिढ़कर आपको भी सजा कर दी तो आपको कौन बचायेगा? आपका फर्जी परमात्मा तो अरबों मील ऊपर कहीं पड़ा सो रहा होगा।

एक बात का और खुलासा नहीं है। स०समा०पृ० १२५ पर लिखा है ''आपका परमात्मा क्या वह ऊँचे मण्डलों से आपसे बातें कर सकता है। वह सर्वज्ञ सर्वव्यापी और सर्वशक्तिमान् है।''

(हमारे ख्याल से अगर वह बहरा नहीं होगा तो रेडियो से आप बात कर सकेंगे, कोशिश करके देखें।)

वस्तुतः आपको इन शब्दों के अर्थ भी नहीं आते हैं। सर्वज्ञ का अर्थ होता है जो सब कुछ जानता हो और इसका भाव है कि जो विश्व के कण-कण, जीवों, प्राणियों, चर-अचर, चैतन्य एवं भौतिक जगत् के बारे में सभी कुछ जाननेवाला है। सर्वज्ञ वही हो सकता है जो सर्वव्यापक, विश्व के कण-कण में व्यापक एवं सर्वान्तर्यामी है। सर्वशक्तिमान् का अर्थ है कि जिसमें विश्व की सभी शक्तियाँ निहित हों अथवा जो अपने करने योग्य कार्य क्षेत्र में बिना किसी की सहायता के अपने सभी कार्य करने में सक्षम हो।

आपके खुदा के नहीं, पर यह लक्षण केवल सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी परमात्मा के हैं। विश्व के कण-कण में व्याप्त होने से वह ज्ञानपूर्वक क्रिया प्रतिक्षण करते हुए अपने सर्वव्यापकत्व को सिद्ध कर रहा है।

आपका फर्जी खुदा तो आपकी मान्यतानुसार एकदेशीय सत्ता होने से कहीं आप जैसे गुरुओं द्वारा कल्पित ऊँचे लोक में आनन्द करता रहता है। वह तो आपके दुःख दर्द की पुकार भी नहीं सुन सकता है। लगता है आपका सम्प्रदाय मुसलमानों के मजहबी खुदा की नकल का ईश्वर मानता है। दोनों मतों के खुदाओं के लक्षण मिलते-जुलते हैं।

गुरुजी ! आप लोग तो लौकिक अर्थों में साक्षात् गुरुजी ही हो। भक्तों के प्रारम्भ से ही तन, मन, धन अपने अर्पण कराकर अपूर्ण से पूर्ण बन जाते हो। —(देखो यथार्थप्रकाश पृ० १११)

कुछ लोग तो भक्तों को अपना मन गुरुजी को समर्पण करने को कहते हैं ताकि शिष्य् गुरु के पूर्ण नियन्त्रण में रहकर गलत बातों को सोच भी न सके, गुरु के निर्देशों पर चलते रहे। कुछ अर्थ लोलुप गुरु लोग चेलों के मन व धन को माँग कर अपनी धनवान् बनने की भूख पूरी करा लेते हैं। राधास्वामी मत के गुरु लोग अपने शिष्य शिष्याओं के 'तन, मन, धन' तीनों को समर्पण करा लेते हैं तथा खुदा को साक्षात् परमात्मा बताकर उनकी मुक्ति तक का ठेका ले लेते हैं। असल में अपने दृष्टिकोण से लौकिक आनन्द प्राप्त करने में वे ही अन्य सब साम्प्रदायिक गुरुओं से ज्यादा कामयाब रहते हैं। दूसरों को मुक्ति दिलाने का उनका झाँसा तो मिथ्या होता है पर वे स्वयं आनन्दमय जीवन बिताते हुए सुख भोगने में सफल रहते हैं। "**यावत् जीवेत् सुखम् जीवेत्।**"

राधास्वामी मत में ईश्वर के लिए कुल मालिक शब्द का प्रयोग भी गलत है। कुल मालिक का अर्थ है कुल का मालिक। एक आदमी अपने पूर्ण कुटुम्ब का स्वामी है तो वह कुल का मालिक कहलायेगा। राष्ट्रपति अपने राष्ट्र का मालिक है तो उस राष्ट्र के लोग उसे कुल मालिक कहेंगे। एक किसान अपने खेत का पूर्ण मालिक है तो वह अपने को कुल मालिक कहेगा। राधास्वामी मत का खुदा (उनका फर्जी ईश्वर, जो केवल सचखण्ड लोक में रहता है) न इस पृथ्वी तक आ सकता है न यहाँ के लोगों के दुःख दर्द की बात सुन सकता है। जिसके लिए यह लोक पराया लोक है, वह बेचारा भी अपने लोक का ही कुल मालिक होगा। हमारी पृथ्वी का उससे सीधा कोई सम्बन्ध न कभी था, न है और न कभी होगा तब वह भी सम्पूर्ण विश्व का मालिक न होने से कुल का मालिक नहीं हो सकता है।

'कुल' शब्द सीमित वस्तुओं के लिए आता है। विश्व अनन्त है। उस अनन्त विश्व के लिए कुल शब्द प्रयुक्त नहीं हो सकता है। कोष में भी कुल शब्द का अर्थ है—इकट्ठा होना, बाँधना, वंश, घराना, कुनबा, जाति, वर्ण। इस आधार पर भी कुल मालिक शब्द परमात्मा के लिए प्रयुक्त करना गलत है। अनन्त विश्व का स्वामी परमात्मा तो वही हो सकता है जो अनन्त में व्यापक और अनन्त का व्यवस्थापक एकमात्र ईश्वर हो। पर उसको कुल मालिक जैसे छोटे अर्थवाले शब्द से सम्बोधित नहीं किया जा सकेगा। कुल मालिक शब्द मुस्लिम धर्म से लिया गया उर्दू शब्द है। राधास्वामी मजहब पर इस्लाम की छाप स्पष्ट है।

सन्त समागम पुस्तक में पृ० ३९ पर राधा स्वामी पन्थ के गुरु जी फरमाते हैं—

"जिन आत्माओं ने मनुष्य शरीर में तप, यज्ञ, दान व अन्य पुण्य कर्म किए या जिन्होंने स्वर्ग-प्राप्ति के लिए विष्णु, शिव या इन्द्र की पूजा की, उन्हें अपने पुण्य कर्मों का फल भोगने के लिए तरह-तरह के स्वर्गों में ले जाया जाता है। ये ही देवी देवता कहलाते हैं।"

ऐसा लगता है गुरुजी ने पुराणों को नहीं पढ़ा है। देवी भागवत पुराण के अनुसार तिब्बत को स्वर्ग, भूटान को शिवलोक, हिमाचल को ब्रह्म का लोक तथा मानसरोवर के आसपास के क्षेत्र को विष्णुलोक कहते थे। केदार कल्प उप पुराण में भी यही माना है। आकाश में कहीं स्वर्ग नरक स्थानों की कल्पना जैसी पौराणिकों की गप्पें हैं, वैसे ही उनका अन्धानुगमन करनेवालों की गप्पाष्टकें हैं। ये गप्प कुरानादि की जन्नत दोजख जैसी कल्पनाएँ हैं। विद्वानों को खास कर गुरु लोगों को जनता में भ्रम नहीं फैलाना चाहिए और न मिथ्या बातों का अपनी झूठी सर्वज्ञता के नाम पर समर्थन करना चाहिए।

आसमानी खुदा राधास्वामी मत के अवतार गुरुजी ने वेदों पर प्रहार करते हुए फरमाया था, "वेद केवल तीन गुणों—सत्, रज, तम की ही बात करते हैं, जिनका काम संसार की उत्पत्ति, पालन और नाश करना है। वेद उस सर्वशक्तिमान् के बारे में कुछ नहीं कहते जो ब्रह्म को भी प्रकाश और सत्ता प्रदान कर रहा है।" —सन्त समागम पृ० ११९

उन्होंने गीता २।४५ में "त्रैगुण्यविषया वेदाः" के आधार पर लिखा था जो सर्वथा मिथ्या है। गुरुजी ने मौलानारूप आदि का उर्दू साहित्य ही पढ़ा था। वेदों में परमेश्वर का वर्णन करनेवाले मन्त्रों की भरमार है। सैकड़ों मन्त्र ब्रह्म विद्या विषयक पेश किए जा सकते हैं। पर उनके फर्जी

सचखण्डरूपी मिथ्या परमात्मा का कोई उल्लेख वेद ही क्यों सम्पूर्ण वैदिक या पौराणिक संस्कृत साहित्य में नहीं है, क्योंकि वेद गप्पाष्टकों का समर्थन नहीं करते हैं। इनका खुदा राधास्वामी केवल एक सौ वर्ष पुराना है—एक व्यक्ति ने जनवरी सन् १८६१ में गढ़कर यह नया नाम उसका रखा था। यह फर्जी सचखण्ड नाम का खुदा तो ऊर्ध्व में रहता है, वह विश्वाधार ब्रह्म को क्या प्रकाश दे सकेगा? उसके महल में तो बिजली भी नहीं लगी है।

इन लोगों ने कई परमात्मा मान रखे हैं। हर पृथ्वीलोक का एक-एक स्वामी, अनेक प्रबन्धक देवता, विभिन्न कार्यों के लिए भिन्न-भिन्न नौकरों के समान इन्स्पेक्टर होते हैं, ऐसा ये मानते हैं। संसार के सभी विचारक ईश्वर को एक मानते हैं पर इस मत के गुरु लोग कई ईश्वर बताकर उनमें से बड़े सचखण्ड ईश्वर का अपने को अवतार बताकर अपनी महानता की शान बघारते हैं, जबकि वास्तव में होते हैं एक तुच्छ इन्सान ही। आज की दुनिया में, दुनियाँ ठगिए मक्कर से, रोटी खाइए शक्कर से और मौज का जीवन बिताइए। इन फर्जी ईश्वर अवतारों की परीक्षा करने का एक अति सरल तरीका है। भारत के इन सभी अवतारों को रेल की पटरी से बाँध दो और जब रेल ऊपर से इनके टुकड़े करती हुई निकल जावे तब इनको उठाकर देखो कि ये जीवित बचते हैं या नहीं? यदि मर जावें तो मनुष्य, यदि मर कट के भी जिन्दा रहें तो अवतार मान लेना। जो भी अपने को परमात्मा का अवतार बताया करे, उसकी ऐसी ही परीक्षा कर लिया करो। इन नकली अवतार बननेवालों की पोल खुल जायेंगी।

राधास्वामी शब्द के बारे में एक और भी बे-सर पैर की कल्पना यथार्थप्रकाश में इनके गुरुजी (इनके ईश्वर के अवतार) ने पेश की है। वे लिखते हैं—

"रचना से पहिले चैतन्य शक्ति अपने केन्द्र में गुप्त थी। इसी को शून्य समाधि की अवस्था कहते हैं। धीरे-धीरे एक समय आया जब कुल मालिक, अर्थात् चैतन्य शक्ति के भण्डार में क्षोभ (हिलोरें) होने पर आदि चैतन्य धार प्रकट हुई और जो कि शक्ति के आविर्भाव के साथ-साथ एक शब्द प्रकट होता है, इसलिए भण्डार की हिलोर से "स्वामी" शब्द और आदि चैतन्य धार से "राधा" शब्द प्रकट हुआ....मनुष्य की बोली में उच्चारण करने पर राधास्वामी शब्द बनता है...यह नाम कुलमालिक का निज नाम माना जाता है।" यथार्थप्रकाश भाग १ पृ० २६

चैतन्य धार से मतलब है इनके खुदा में पानी की धार की तरह धारें बहना। ज्यादा ठण्ड पड़ने पर वह बर्फ की तरह जम भी जाती होगी।

इस सम्प्रदायवालों ने यह ऊँट-पटाङ्ग कल्पना क्यों की है, इसका रहस्य भी इन्हीं की जवानी सुनिए। यथार्थप्रकाश भाग १ में पृ० ३० पर लिखा है—

''स्वामी जी महाराज की धर्मपत्नी का शुभ नाम श्रीमती नारायणी देवी था। हाँ, राधास्वामी मत के स्थापित होने के कुछ काल के उपरान्त जब सत्सङ्गों में निरर्थक और पौराणिक नामों के बदले सार्थक तथा प्रभावशाली परमार्थी नाम रखने की प्रथा प्रचलित हुई और प्रात: प्रत्येक सत्सङ्गी स्त्री पुरुष ने नया परमार्थी नाम रखवाया तथा उस समय उसका नाम राधाजी रखा गया।''

'इस मत की स्थापना स्वामीजी महाराज ने सन् १८६१ में की थी।' पृ० ७६

इस पृथ्वी के जन्म को लगभग दो अरब वर्ष बीत चुके हैं। इतने लम्बे दो सौ करोड़ वर्षों तक इनके कल्पित परमात्मा ने कोई अवतार नहीं लिया था और न कभी किसी महापुरुष ने किसी साहित्य में यह बताया था कि ईश्वर एक स्थान पर मूर्छित बैठा रहता था, एक समय आया तब उसके अन्दर हिलोरें समुद्र के पानी की तरह उठने लगीं और उनमें से लहरों के टकराने से राधा और स्वामी शब्द पैदा हो गए। परमात्मा में से धारें निकलने लगीं और दुनिया बनती गई।

इनका कहना है कि श्वास अन्दर खींचने में 'रा' अक्षर बनता है तथा बाहर निकालने में 'धा' बनता है। दोनों को मिलाने से राधा बनता है। हमारा कहना है यह गलत है। आप राधा-पाधा, रामा, कुत्ता, हंसा, दिल्ली, बिल्ली, मूरख, गन्ना, पिल्ला दास, पास जो भी सोचेंगे बन जायेगा। एक अक्षर श्वाँस खींचते वक्त व दूसरा श्वाँस निकालते वक्त सोचें, चाहे जो शब्द बना लेवें। हंसामतवालों ने ऐसे ही हँसा शब्द की उत्पत्ति लिखी है। सम्प्रदायवादी लोगों की कल्पनाएँ भी अटपटी और बुद्धि विरुद्ध होती हैं। इन हीनबुद्धि के शत्रुओं को यह भी नहीं मालूम है कि विश्व अनन्त है जो सदैव कायम रहता है, करोड़ों सूर्य हैं, अरबों तारागण तो एक ही आकाश गङ्गा में हैं। ऐसी लाखों आकाश गङ्गाएँ अनन्त आकाश में हर समय विद्यमान रहती हैं, जिनमें प्रतिक्षण रचना व विनाश की नियमपूर्वक क्रियाएँ होती रहती हैं। कहीं किसी भाग में किसी लोक का विनाश होता है तो कहीं निर्माण क्रम भी चालू रहता है। ऐसा कोई क्षण नहीं होता है, जब परमात्मा की ज्ञानपूर्वक क्रिया बन्द रहती हो और वह स्तब्ध वा मूर्छित निठल्ला रहता हो। यदि इस रहस्य को, विश्व में अनन्त रचना के भेद को

इस पन्थ के लोग समझ पाते तो ईश्वर के बारे में इस प्रकार की गप्पाष्टकें गढ़कर लोगों को न बहकाते। इस पृथ्वी की रचना में भी करोड़ों साल लगे थे। एक दम फूँक मारते ही या सौ दो सौ वर्षों में यह नहीं बन गई थी।

'राधास्वामी' शब्द सम्पूर्ण भारतीय प्राचीनतम साहित्य में एक भी जगह नहीं आया है। आज से लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व महाभारतकाल में उस सूत की पत्नी का नाम राधा मिलता है, जिसने कर्ण को पाला था। उसके बाद ब्रह्मवैवर्त पुराण में उस स्त्री का नाम राधा दिया है, जिसे श्रीकृष्णजी की प्रिया गोपी बताया गया है। श्रीमद्भागवत पुराण में राधा शब्द तक नहीं है। एक स्थान पर 'अनुराधा' शब्द आया है, जिसका अर्थ आराधना करना है।

राधास्वामी नाम का कुटिल अनर्गल आविष्कार इस पन्थवालों ने पौराणिक नामों को बदलने के लिए द्वेषवश किया है, जो लगभग १०० वर्ष पूर्व सूझा था। इन्होंने ईश्वर के नाम आत्मा का नाम, अनेक ब्रह्म, अनेक ब्रह्माण्ड, छोटे-बड़े ईश्वर, उनके रहने के दूर-दूर महल वा लोक न्यायाधीश यमराज की कचहरी, उसका महल, स्वर्ग-नरक, भूत-प्रेत, अपने फर्जी ईश्वर सचखण्ड के बार-बार अवतार लेने, ईसामसीह व मौहम्मद साहब को भी अवतार मानने, इनके गुरुजी का मरनेवाले सभी कुसङ्गियों को माफ कर देने, उसके साथ यमराज की कचहरी तक सिफारिश को जाने, उनको तीन बार के जन्मों में ही अपने ईश्वर के पास ले जाकर सरलतम मुक्ति दिलाने के बे-सर पैर की गप्पाष्टकें कल्पित करके लोगों को बहका रखा है। अपने चेलों-चेलियों (सत्सङ्गियों) के तन, मन, धन को अपने हवाले करा लेने का इनके गुरु (भगवान् के अवतारों) का पहला काम होता है।

जैसे मुसलमान बनते ही उसका नाम व हुलिया बदल दी जाती है, हिन्दू देवी देवताओं से मन फेर दिया जाता है। उपासना, रहन-सहन का तरीका बदल कर उसे एक पृथक् जाति का रूप दे देते हैं, वैसे ही जो इनके चक्कर में फँस जाता है, उसकी भी हुलिया, उपासना का ढङ्ग, उपास्य, नाम आदि बदल देते हैं और इसीलिए इन्होंने तरह-तरह की बेतुकी बातें लोगों को बहकाने को गढ़ रखी हैं। इनका ठेका है कि बिना इनको गुरु किए कोई भी मुक्त नहीं हो सकता है। वेद, उपनिषद्, दर्शन, विज्ञान सभी के ये शत्रु या विरोधी हैं।

भारतीय वैदिक योगाभ्यास की विधि व योगदर्शन तथा योगियों की तप:पूत अनुभूत योगपद्धति के विरोध करने का उनका तरीका भी देखें। सन्त समागम के पृष्ठ ३९ पर लिखा है—गुरुजी ने फरमाया, "पुराने जमाने

में योगियों को पिण्ड के षट्चक्रों को पार करने में सैकड़ों वर्ष लग जाते थे और इतना भी बड़ी मुश्किल से कर पाते थे। अष्टदल कमल उनका सबसे ऊँचा व आखिरी स्थान था, जबकि सन्त मत की शुरुआत ही यहाँ से होती है। आत्मा के नीचे के चक्रों से ऊपर उठाने के लिए योगीजन प्राणों का सहारा लेते थे, किन्तु चिदाकाश (शरीर के अन्दर पहला आकाश, जो तीसरे तिल में हैं) ऊपर पहुँचते ही प्राण चिदाकाश में लीन हो जाते थे और योगी वहाँ से आगे नहीं बढ़ पाते थे। उन्होंने यह मान लिया कि यह चक्र ही परमात्मा का सबसे ऊँचा धाम है। एक लम्बे अरसे तक वहाँ निवास करने के बाद उनमें से कुछ, पर बहुत थोड़ों ने जो कुछ बहुत ज्यादा पहुँचे हुए थे प्रकाश की तेज किरणों को ऊपर से आते देखा। इस प्रकाश के सहारे वे कुछ और आगे बढ़े और त्रिकुटी तक पहुँच गए। यहाँ आकर इन योगेश्वरों की गति रुक गई और वे आगे नहीं गए। उन्होंने इसी कमल (ब्रह्म मण्डल) को परमेश्वर, ब्रह्म और संसार की रचना, पालन व नाश करनेवाले का धाम कहना शुरू कर दिया।''

इन गुरुओं ने कभी न तो योगाभ्यास किया होता है और न योगक्रिया विधि-विधानों के रहस्य ही समझते हैं, पर दूसरों की निन्दा करने में तत्पर रहते हैं। प्राणायाम शारीरिक स्वास्थ्य को ठीक रखने व चञ्चल मन के एकाग्र करने का साधन होता है। मन को एकाग्र होने पर शरीरगत इन्द्रियों की शक्तियों का पूर्ण विकास होता है। काम में मन:शक्ति को एकाग्र करने से सुनने की शक्ति इतनी बढ़ जाती है कि आकाश में व्याप्त सूक्ष्म शब्दों तक को सुना जा सकता है। कण्ठ कूप में एकाग्र करने से भूख-प्यास की निवृत्ति होती है। नाभि स्थान पर करने से शरीर की रचना का ज्ञान होता है। इसी प्रकार दोनों भृकुटी के मध्य में एकाग्रता का अभ्यास करने से भूत-भविष्यत् की बातों का ज्ञान हो जाता है। मानवीय मस्तिष्क के दो भाग होते हैं, लघु व तार्किक। लघु मस्तिष्क में वर्तमान एवं पूर्व जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार संगृहीत रहते हैं। इसका स्थान सर पर जहाँ चोटी रखी जाती है, उसके नीचे होता है। इसमें तेंतालीस ग्रन्थियाँ वा ग्लैण्ड्स होते हैं। जैसे सिनेमा की मशीन दूर स्थान पर होती है और उसका अक्स (फोकस) दूर परदे पर पड़ता है, उसी तरह लघु मस्तिष्क के संस्कारों का अक्स त्रिकुटी के मध्य में ध्यान वा मन को एकाग्र करने पर संस्कारों का दर्शन अथवा भूत, भविष्यत् व वर्तमान की बातों का कुछ ज्ञान हो जाता है।

तार्किक मस्तिष्क जाग्रत अवस्था में काम करता है। लघु मस्तिष्क के द्वारा ही प्राणी स्वप्नदर्शन भी करते हैं। उप चेतना शक्ति (सब कॉन्शियस माइण्ड) इसी से जागृत होती है। यह सब प्राणायाम तथा योगाभ्यास की

प्राथमिक सीढ़ी व उसके लाभ होते हैं। यही वह स्थान है जहाँ एकाग्रता का अभ्यास कर लेने पर साधक जिस व्यक्ति का चिन्तन करता है, उसकी आकृति सामने आ जाती है। परीक्षा के लिए छपे हुए पर्चे का ध्यान करने पर पूरा पर्चा ही सामने आ जाता है और पढ़ा जा सकता है। किसी खोई वस्तु वा बात का ध्यान करने पर उसकी सही स्थिति सामने आ जाती है। इससे और आगे अभ्यास बढ़ाने पर किस प्रकार सिद्धियाँ तथा ईश्वरानुभूति होती है, यह विषय योगदर्शन आदि धर्मशास्त्र में वर्णित हैं, जो कि इस विषय में सिद्ध शास्त्र हैं। पर गुरु लोग तो अपने को ही साक्षात् ईश्वर मानते हैं। उन्हें किसी तप त्याग या अभ्यास की जरूरत ही नहीं होती है। यह कल्पना भी गलत है कि योगीजन किसी कमल को ही ईश्वर मानकर अटके रहते थे और ईश्वरानन्द का अनुभव नहीं करते थे।

आपका खुदा तो करोड़ों कोस ऊपर कैद रहता है। उसे जमीन पर तो आना नहीं होता है, तब उसे कोई देखकर अनुभव नहीं कर सकेगा। अनुभव तो उसी का होता है जो सर्वव्यापक होने से सर्वान्तर्यामी होता है। आप तो सन्तों को भी झूठा मानते हैं। आपने लिखा है कि "गुरु गोविन्दसिंह जी ने कहा था 'जो कोई मुझे परमात्मा कहेगा वह सीधा नरक में जायेगा।" इस पर आप फरमाते हैं—उन्होंने हमेशा अपने को दास ही कहा है····वे नम्रतावश ऐसा कहते हैं।"

"हालांकि सन्त अपने आपको दास कहते हैं, पर जाननेवाले जानते हैं कि वे कुलमालिक (परमात्मा) ही होते हैं।" —स०समा० १९७

इसमें आपने सभी सन्तों को साक्षात् अपना परमेश्वर मानकर झूठ बोलनेवाला घोषित किया है, यह भी इसलिए कि लोग आपको भी ईश्वर मानकर पूजें और चेले-चेलियाँ अपना तन, मन, धन आपको दे देने में संकोच न करें। अगर एक ही गुरु परमात्मा होता है तो अल्पायु में मर क्यों जाता? कोई भी सौ वर्ष तक जिन्दा नहीं रह सका है।

लोगों को ठगने खाने का एक उत्तम तरीका आपने बना रखा है कि किसी भी क्रिया के करने, नियमों के पालन करने, धर्म कर्मों के झंझट से बचकर मोक्ष प्राप्त करने का सर्वोत्तम तरीका यह है कि "जन्म मरण के छुटकारे के लिए यही शर्त है कि "परतीत गुरु की करना मार्ग शब्द गुरुजी से लेना।" सत्गुरु में पूर्ण विश्वास और उनके चरणों का गहरा प्यार जागृत करना और उनसे शब्द का भेद लेकर आन्तरिक अभ्यास करना ही छुटकारे का उपाय है।" वस्तुतः यह सारा पाखण्ड है। ये सब गुरु लोग तो आप ही दाता मंगिता, 'द्वार खड़े दरवेश' वाली स्थिति में होते हैं। खुद तो कुछ

जानते नहीं जन्म-मरण के चक्करों में फँसे दुनिया को गुमराह करके पाप कमाते रहते हैं व लोगों में अपने को साक्षात् परमात्मा का अवतार बताकर उनको ठगने व चेले फँसाकर सम्प्रदाय चलाने में मस्त रहते हैं। ईसा, मूसा, मोहम्मद, कृष्ण व राम भी अवतार थे और हम भी अवतार हैं, यह उनका गुरुमन्त्र है। तुम भी खुदा और हम भी खुदा हैं। कोई किसी की निन्दा मत करो, किसी की पोल मत खोलो। ईश्वर अवतार बनने की पोल में घुसकर आनन्द का जीवन काटते रहो। आगे जो होगा सो होता रहेगा। सन्त (हम) तो परमात्मारूप हैं। (पृ० २१०) इन्हें दूसरों की चिन्ता नहीं रहती है।

राधास्वामी सम्प्रदाय में एक प्रथा थी जो अब है या नहीं, पता नहीं है। गुरु के सामने वह सभी प्रसाद जो सत्सङ्ग के बाद बाँटा जाता था, थालों में रख दिया जाता था। गुरुजी सभी में से थोड़ा प्रसाद लेकर खाते थे। खूब चबा लेने के बाद उसे प्रसाद से भरे थालों पर थूक देते थे। वह गन्दा थूक से भ्रष्ट प्रसाद चेले कुसंगियों में बाँटा जाता था। इस पर जब लोगों ने एतराज किए तो आगरा के गुरुजी ने इस थूक चाटने का समर्थन अपनी किताब यथार्थप्रकाश भाग १ में पृ० ११२ से १३२ तक लिखा है, उसमें आपने फरमाया है—

(१) रोजाना गुरु के पैरों का धोबन पीना व गुरु की झूँठन सभी चेलों को खाना चाहिए। (नं० ३५) (पृ० ११२)

(नं० ४०) में लिखा है—'हजरत मसीह ने अपने थूक के द्वारा अनेक चमत्कार दिखाए थे। ईसा ने एक अन्धे आदमी की आँख में थूक दिया और उसे दीखने लगा था।

हारीत स्वामी ने वाया रावल के मुँह में थूक दिया था। हजरत मोहम्मद ने अपने नाती के मुँह में थूक दिया। (पृ०११७) एक बार एक दासी ने गुरु नानक जी के सोने की दशा में चरण जीभ से चाटे थे तो उसकी दिव्य दृष्टि खुल गई थी। (पृ० ११८) गुरुजी के चरणों को धो-धोकर पीवें। (पृ० ११९) अनेक मतों की पुस्तकों से सिद्ध है कि महात्माओं के प्रसाद चरणामृत और मुखामृत (थूक चाटने का) का सदा आदर होता रहा है। (पृ० ११९) जगन्नाथ जी के मन्दिर में जाकर लोग जहानभर का जूठा भोजन खाते हैं। (पृ० १२०) श्री कृष्ण ने एक गोपी के मुँह में अपना झूठा पान दे दिया। मोहम्मद साहब ने ह० अली की आँखों में अपना थूक फूँका था। (पृ० १२३) 'पीकदान ले पीक करावे, फिर सब पीक आप पी जावे।' (पृ० १२६) जब गुरु महाराज पीक फैंकना चाहें तो पीकदान पेश करे और पीकदान साफ करते समय पीक फैंकने के बजाय स्वयं उसे पी जावें।''

(पृ० १३०) भागवत में लिखा है—मैं मुनियों की आज्ञा से उनके भोजन से बची हुई झूठन खा लेता था। इसी से मेरे सम्पूर्ण पाप नष्ट हो गए। (पृ० १३३)

अघोरी सम्प्रदाय में तो मल मूत्र तक खा लेने की प्रथा है। जैन शास्त्र में साधु के मल मूत्र से सभी रोग दूर होना लिखा है। तब उन्हीं गन्दी बातों का अनुकरण राधास्वामी मत में हो तो कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। थूक चाटना, पान की पीक पीना, पैरों को धो-धोकर पीना, गुरुजी की मल मूत्र से गन्दी लङ्गोट को निचोड़ कर पीना, उनके गन्दे पैरों के मैल की गन्दगी को जीभ से चाट-चाट कर साफ करना यह सब इन सम्प्रदायों में बुरा कैसे माना जा सकता है। जब तन, मन, धन सभी गुरुजी को दे दिया तो फिर शेष क्या रह जाता है।

संसार जानता है कि मुँह के थूक में भी हानिकारक द्रव्य होता है। कोई आदमी किसी छोटे-बच्चे के मुँह से मुँह मिला देता है तो बालक को मुँहा हो जाता है। मुँह लाल होकर छाले हो जाते हैं। मुँह से मुँह मिलाना, चुम्बन लेना, हाथों से हाथ मिलाना सभी रोग पैदा करते हैं। पर गुरुजी को चेले-चेलियों को भ्रष्ट करने में संकोच नहीं होता है। संसार का हर शिक्षित व्यक्ति इस कुकर्म को बुरा कहेगा। प्रसाद तो वैसे भी बाँटा जा सकता है। गुरुजी हाथ से छूकर भी बँटवा सकते हैं ? क्या यह बहुत जरूरी है कि उस पर गन्दा थूक डालकर ही बाँटा जावे। कोई भी शरीफ आदमी ऐसा गन्दा प्रसाद किसी को देने से नफरत करेगा। चेलों का झूठा गुरुजी खावें और उनका झूठा चेले खाते तब तो समझा जा सकेगा कि गुरु चेलों में सच्चा प्रेम है, वरना झूठा खिलाकर चेलों को रोग ग्रस्त बनाना ही है। जो प्रमाण झूठन या थूक के दिए गए हैं, वे सब व्यर्थ व अमान्य हैं। गन्दे काम किसी ने किए हों वे अनुकरणीय व आचरणीय या प्रमाण नहीं हो सकते हैं। इनका अनुकरण गन्दे सम्प्रदायों में गन्दे लोग ही करते हैं व इनका समर्थन करते हैं। इसके स्थान पर गुरु-चेले एक-दूसरे का पेशाब पीने व पिलाने लगते तो मूत्रपान चिकित्सा द्वारा आपका कुछ लोग समर्थन भी कर सकते थे।

यज्ञों में शेष बचे भाग को यज्ञ का उच्छिष्ट कहते हैं। चौके में भोजन बने, सभी लोग भोजन कर लेवें। बाद को कोई अतिथि आ जावे तो चौके में शेष बचे भोजन पदार्थों को उच्छिष्ट कहा जाता है। इसे आपने अपने थूक से गन्दे किए हुए प्रसाद के समान उच्छिष्ट माना है, यह आपकी अज्ञानता है।

अपने गुरु के मरने पर आप उनको 'गुप्त' होना कहते व लिखते हैं, जो कि गलत है। यदि गुरुजी सदेह एकदम गायब हो जाया करें या आकाश में ऊपर को उठे चले जाया करें और देखते-देखते गायब हो जाया करें तब तो 'गुप्त' होना कहा जायेगा। पर जब वे भी हर आदमी की तरह शरीर त्यागते हैं, शव की दाह क्रिया की जाती है तो वे 'गुप्त' नहीं कहे जा सकते हैं। इस प्रकार तो हर मरनेवाला गुप्त होना कहा जायेगा। जो इस शब्द का गलत प्रयोग होगा। 'गुप्त' का अर्थ भी छिपा हुआ वा अदृश्य होता है जो कि प्रत्यक्ष मरे हुए को नहीं कहा जा सकता है।

***नोट**—दो पुस्तकें यथार्थप्रकाश भाग १ व २ दयाल बाग, आगरा ने छापी हैं। उनके वैदिकधर्म को गलत समझने, गलत प्रतिपादन करने व आक्षेपों का उत्तर विस्तार से अन्य पुस्तक में दिया जायेगा। इस समय 'सन्त समागम' पुस्तक के पाखण्ड का खण्डन इस पुस्तक में किया गया है जो 'राधास्वामी सत्सङ्ग-व्यास, जिला-अमृतसर (पंजाब) से सन् १९७६ में छापी गई थी। आशा है, इस सम्प्रदाय के आडम्बरों व मान्यताओं से जनता गुमराह होने से बच सकेगी एवं पुस्तक ज्ञानार्जन में सहायक सिद्ध होगी।*

—०—

आचार्य डॉ० श्रीराम आर्य

श्री घूडमल प्रहलादकुमार आर्य धर्मार्थ न्यास

आवरण : श्रीमहालक्ष्मी, ०११-६५८४५५११, ९३१३७८४२७२